

जापान की कहानियाँ

अबरार मोहसिन

जापान की कहानियाँ

अबरार मोहसिन
कामरान मोहसिन

ईशान प्रकाशन
नई दिल्ली-110 002

मूल्य : रु. 30.00

पहला संस्करण : 2002

प्रकाशक : ईशान प्रकाशन
7/23, अंसारी रोड, दरियागंज
नई दिल्ली-110 002

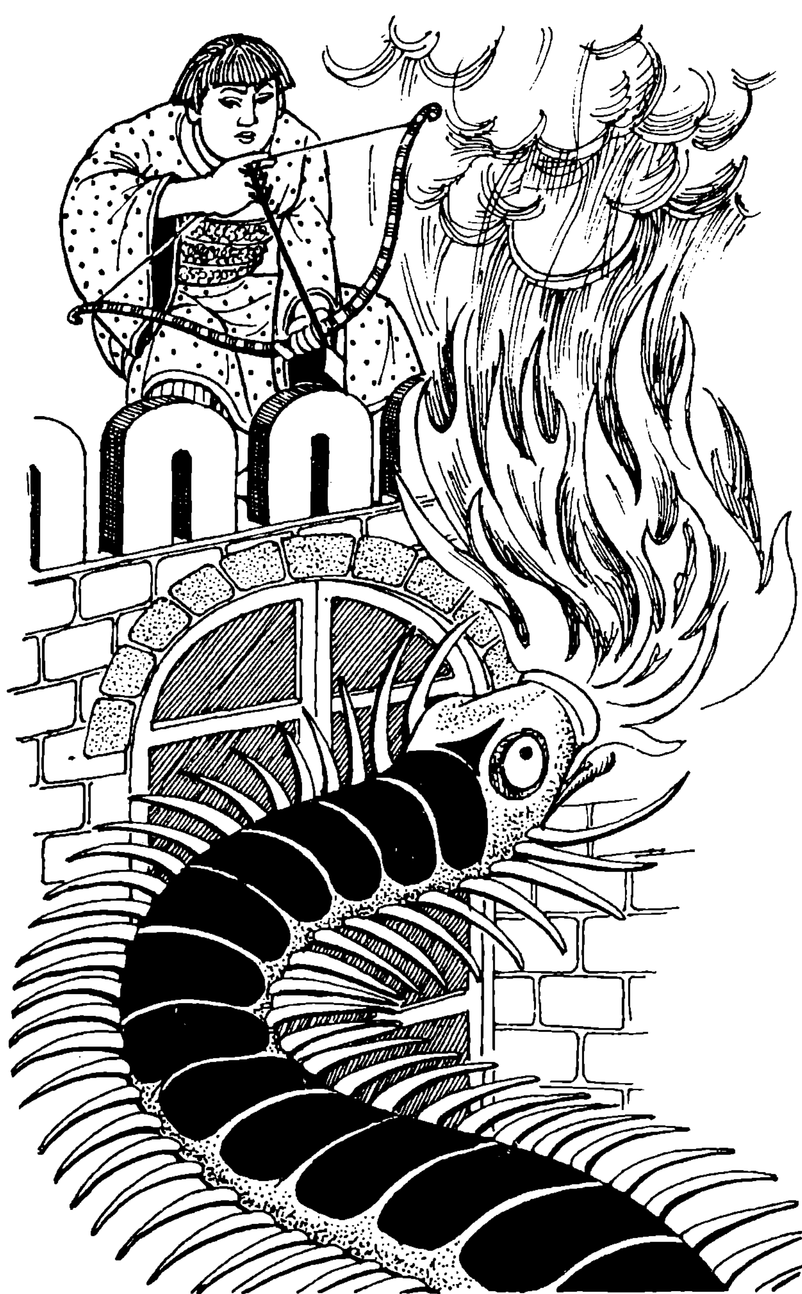
मुद्रक : बी.के. ऑफसेट
नवीन शाहदरा, दिल्ली-110 032

चित्र : शिवकुमार सिन्हा

JAPAN KI KAHANIYAN
by Abrar Mohsin & Kamran Mohsin

क्रम





वीर यमाटो

बहुत दिन हुए, जापान के राजा के घर एक बेटे ने जन्म लिया। सारे देश में उसके जन्म की खुशी एक उत्सव के समान मनाई गई। जैसे-जैसे वह बड़ा होता गया, उसकी सुन्दरता, वीरता और बुद्धिमानी की धूम मचने लगी।

राजा को भी ऐसा लगने लगा, जैसे वह कोई साधारण बालक न हो—'मेरा यह बेटा महान कार्यों के लिए पैदा हुआ है।' वह मन में सोचा करता।

उसका नाम 'यमाटो' रखा गया।

जब वह बड़ा हुआ, उस समय दो डाकुओं ने पूरे देश में तबाही मचा रखी थी। वे लोगों को लूटते, उन्हें मार डालते और घरों को आग लगा देते थे। वे राजा का विद्रोह करते और उसके क़ानूनों को तोड़कर खुश होते थे। वे इतने भयंकर और बलवान थे कि राजा के सिपाही उन्हें पकड़ ही नहीं पाते थे।

जब यमाटो सोलह वर्ष का हो गया तो राजा ने उससे कहा, "ऐ मेरे बच्चे, अब तुम सोलह वर्ष के हो गए हो और तुम्हें महत्त्वपूर्ण कार्य करने हैं। जाओ, सबसे पहले इन दो डाकुओं को ठिकाने लगाओ जिन्होंने देश-भर को परेशान कर रखा है। यह काम केवल तुम ही कर सकते हो। तुमसे सबको बड़ी आशाएँ हैं।"

यमाटो ने कहा, "मैं विश्वास दिलाता हूँ कि आपको निराश

नहीं करूँगा और उन दुष्ट डाकुओं का सफ़ाया करके ही दम लूँगा। आप चिन्ता न करें।''

उसने देश के महान वीरों को अपने साथ चलने का न्योता दिया और नगर छोड़ने से पहले वह अपनी बुआ के पास उसका आशीर्वाद लेने गया।

बुआ ने उसे आशीर्वाद के साथ ही एक वस्त्र भी दिया और कहा, ''यह वस्त्र तेरे बहुत काम आएगा।''

अपने माता-पिता से विदा लेकर वह वीरों के साथ दक्षिण की ओर चल पड़ा। चलते-चलते वे उस स्थान के निकट पहुँच गए जहाँ डाकू रहते थे। वह एक ऐसा स्थान था जहाँ आकाश को छूते हुए पहाड़ों के बीच तंग और अँधेरी घाटियाँ थीं और मार्ग में बड़ी-बड़ी चट्टानें टूटी पड़ी थीं। अँधेरे के कारण मार्ग भी नहीं सुझाई देता था।

यमाटो ने मन में सोचा—'ऐसे भयंकर स्थान पर डाकुओं से युद्ध करना मूर्खता होगी, क्योंकि हम सब ही इस स्थान पर अजनबी हैं। यहाँ वीरता से अधिक चतुराई की आवश्यकता है।'

यह सोचकर उसने अपनी पत्नी से, जो कि उसके साथ ही आई थी, कहा, ''मुझे बुआ का दिया हुआ वस्त्र पहनाकर एक सुन्दर स्त्री का रूप दे दो।''

थोड़े समय के बाद जब उसने आईना देखा तो उसे अपनी आँखों पर विश्वास नहीं हुआ—वह तो एक सुन्दरी बन चुका था। लम्बे-लम्बे बाल कंधों पर लहरा रहे थे। लाल-लाल होंठ जैसे गुलाब की पँखुड़ी; आँखें जैसे दो दीपक !

वह अपने आपको ही न पहचान सका। कौन कह सकता था कि उन सुन्दर वस्त्रों में एक छुरा भी छुपा हुआ है !



उधर दोनों भयंकर डाकू अपने ख़ेमे में बैठे बातें कर रहे थे, "सुना है, राजा का चतुर और वीर बेटा 'यमाटो' हमें मारने के लिए निकला है; परन्तु वह हम तक पहुँचेगा कैसे ?"

"वह तो मार्ग में ही मर जाएगा। अगर यहाँ तक आ भी गया तो हमारे हाथों बचेगा कैसे ?"

"हम तो राजा की पूरी सेना के भी छक्के छुड़ा दें—हा-हा-हा !"

इतने में वे चौंक पड़े। एक बहुत ही सुन्दर स्त्री मटकती हुई उनकी ओर चली आ रही थी। वे दोनों उस पर मोहित हो गए।

"कौन हो तुम ?" उन्होंने पूछा।

"रास्ता भटककर इधर आ निकली हूँ। समझ में नहीं आता कि कहाँ जाऊँ ?" वह इठलाकर बोली।

उन्होंने कहा, "तुम्हें कहीं जाने की आवश्यकता ही क्या है ? हमारे पास ही रहो।"

वहीं एक कोने में शराब रखी थी।

यमाटो ने शराब के प्याले भर-भरकर उन्हें पिलाना आरम्भ किया, और उन्हें इतनी पिला दी कि वे बेहोश हो गए।

फिर उसने उन दोनों को छुरे से मार डाला।

अब उसने अपने वीरों और पत्नी को वापस भेज दिया और अकेला ही एक और डाकू को मारने चल पड़ा, जिसने लूट-मार मचा रखी थी। चलते हुए वह एक नगर पहुँचा जहाँ उसने लकड़ी की एक तलवार बनवाई, उसे अपनी म्यान में ठूँस लिया और आगे चल दिया। एक जंगल में उस डाकू से उसकी भेंट हुई। उसने डाकू से मित्रता का ढोंग रचाया।

डाकू उसके झाँसे में आ गया। डाकू इतना भयंकर और बलवान था कि उसे भी केवल चतुराई से ही मारा जा सकता था।

एक दिन अवसर पाकर यमाटो ने चुपके से डाकू की म्यान में से उसकी तलवार निकालकर उसकी जगह लकड़ी की तलवार रख दी। फिर दोनों अपनी-अपनी तलवारबाज़ी की बड़ाई हाँकने लगे।

देश के उस भाग में उस डाकू से बड़ा कोई और तलवारबाज़ नहीं था। उसने यमाटो से कहा, "मेरी तलवार लोहे को भी काट सकती है। कौन है जो मुझसे मुक़ाबला कर सके ?"

यमाटो हँसकर बोला, "चलो, हम तलवारबाज़ी करें। देखें, कौन किसे हराता है !"

डाकू मान गया।

यमाटो अपनी तलवार निकालकर उसकी ओर झपटा। डाकू की तलवार म्यान में अड़ी हुई थी। बहुत ज़ोर लगाने पर बाहर निकली। लकड़ी की तलवार थी, भला वह उससे किस प्रकार लड़ता ? यमाटो ने एक ही वार में उसका सिर काट दिया।

इसी प्रकार अनेक डाकुओं को हराकर यमाटो घर लौटा जहाँ माता-पिता और सब नगरवासियों ने उसका स्वागत किया।

अब वह अपने महल में सुख से दिन बिताने लगा। परन्तु ऐसा जीवन उसे पसन्द नहीं था। उसे तो ख़तरों से भरा वह जीवन ही भाता था जो वीरों को शोभा देता है। महल के आलसी वातावरण में उसका दम घुटता था।

एक दिन उसे उदास देखकर राजा ने कहा, "ऐसा लगता है कि तुम इस महल के जीवन से ऊब रहे हो। मेरा मन तो यही चाहता है कि तुम मेरी आँखों के सामने ही रहो, परन्तु मैं किसी भी कारण तुम्हें दुखी नहीं देख सकता। तुम जाना ही चाहते हो तो सुनो, पूर्वी द्वीप के जंगली क़बीलों के लोग देश के उत्तरी भाग में तबाही मचा रहे हैं। तुम जाकर उन्हें कुचल दो।"

यह कहकर राजा ने उसे एक भाला दिया।

"यह साधारण भाला नहीं है।" राजा ने बताया, "यह केवल महावीरों को ही दिया जाता है।"

यमाटो ने भाले को चूमा और चल पड़ा।

सबसे पहले वह अपनी बुआ के पास गया जिसने उसे पहली बार एक वस्त्र दिया था। वह सूर्य देवता के मन्दिर की पुजारिन थी। इस बार बुआ ने उसे एक पवित्र तलवार दी जो जापान के बड़े-बड़े वीरों के हाथों में रह चुकी थी।

जब वह यात्रा पर निकला तो वीरों की एक विशाल टोली के साथ ही उसकी पत्नी भी साथ थी। वह यमाटो से बहुत प्यार करती थी और उसके कारण यात्रा की सैकड़ों कठिनाइयों और संकटों को झेलने को तैयार थी।

जब चलते-चलते उसके पैरों में छाले पड़ गए और धूप से उसका रंग भी काला पड़ गया तो यमाटो ने कहा, "तुम वापस लौट जाओ। महल के सुखी जीवन को लात मारकर मेरे साथ ठोकरें क्यों खा रही हो ?"

उसने साफ़-साफ़ कह दिया, "मैं अपने पति के साथ ही रहूँगी, चाहे जितने भी दुख झेलने पड़ें।"

चलते-चलते वे एक ऐसे प्रान्त में पहुँचे जहाँ का गवर्नर राजा का शत्रु था।

उसने यमाटो को देखकर उसका हार्दिक स्वागत करने का ढोंग

किया, परन्तु मन ही मन वह उसे मारने की योजना बनाने लगा।

एक दिन गवर्नर ने कहा, "चलो मित्र, आज शिकार खेलने चलें।"

वे दोनों नगर से चल पड़े और जंगल में पहुँच गए जहाँ लम्बी-लम्बी सूखी घास थी।

वहाँ जाकर गवर्नर उसे अकेला छोड़कर कहीं छुप गया।

यमाटो जंगल में इधर-उधर भटकने लगा। उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि किस ओर जाए ?

अचानक वह चौंक पड़ा—

उसके सामने वाली घास धड़ाधड़ जल रही थी। आगे जाना संभव नहीं था। उसने दाएँ, बाएँ और पीछे मुड़कर देखा। हर ओर आग ही आग थी। बचकर निकलने का कोई रास्ता नहीं था।

अब वह क्या करे ?

वह समझ गया कि गवर्नर इस प्रकार उसे मारना चाहता था।

वह अभी इसी विचार में था कि कैसे जान बचाए तभी उसके कानों में आवाज़ आई, "तलवार को हाथ में ले !"

उसने जैसे ही तलवार को हाथ में लिया, तलवार आप से आँप चलने लगी और चारों ओर की घास क्षण भर में काट दी।

यमाटो ने तुरन्त ही सारी घास को एकत्र करके दूर ढेर लगा दिया। जब आग निकट आई तो उसके आस-पास घास न होने के कारण उस तक न पहुँच सकी और वह सुरक्षित रहा। और फिर अचानक ही हवा की दिशा भी ऐसी बदली कि आग उससे दूर होती गई। यहाँ तक कि वह उस झाड़ी तक भी पहुँच गई जिसमें गवर्नर छुपा बैठा था। गवर्नर जलकर राख हो गया।

अब यमाटो आगे की ओर चला, और कई दिनों के बाद एक ऐसे स्थान पर पहुँचा जहाँ एक सुन्दर महल खड़ा था। उस महल में एक रानी रहती थी जो चाँदनी के समान सफ़ेद थी—वह चाँदनी जो बर्फ़ पर



झिलमिलाती है। उसके वस्त्र तितलियों के पंखों जैसे रंगीन थे।

यमाटो उसे देखते ही उस पर मोहित हो गया।

उसने सोचा—'यह रानी कितनी सुन्दर है ! मेरी पत्नी अपना सारा रूप खो चुकी है।' और यह सच बात थी। यात्रा की कठिनाइयों ने वास्तव में ही उसकी पत्नी की सुन्दरता को समाप्त कर दिया था। उसके बाल धूल से भरे थे और वस्त्र भी फट गए थे; परन्तु यह सब यमाटो के कारण ही तो हुआ था। उसी के प्यार में वह उसके साथ ठोकरें खाती फिर रही थी।

दुख की बात यह थी कि यमाटो यह भूल चुका था। अब उसे उस रानी के सिवा और कुछ भी याद नहीं रहा था।

कई दिन वह रानी के पास रहा। जब चलने का समय आया और वह विदा लेने लगा तो रानी ने यमाटो से उसकी पत्नी के विषय में पूछा, "यह कौन है ?"

"मेरी दासी।" यमाटो ने साफ़ झूठ बोल दिया।

उसकी इस बात से उसकी पत्नी के दिल को चोट लगी, फिर भी वह चुप रही।

यमाटो बेवफ़ा निकला था।

'वापस लौटकर मैं इस रानी के साथ विवाह करूँगा।' वह मन में सोच रहा था।

कई दिनों की यात्रा के बाद वे समुद्र तट पर पहुँच गए। यहाँ उन्हें नावों में बैठकर जंगलियों के द्वीप तक जाना था।

समुद्र को देखकर उसके वीरों के मन में भय पैदा हुआ। यह देखकर यमाटो उनका साहस बढ़ाने के लिए बोला, "अरे, यह समुद्र भी कोई ऐसी वस्तु है जिससे कोई डर जाए ! मैं तो एक ही छलाँग में इसके पार उतर जाऊँ।"

वे सब नाव में बैठ गए और नाव तट से दूर होती गई। जैसे ही वह खुले समुद्र में पहुँची कि भयंकर तूफ़ान आ गया। समुद्र

में पहाड़ जैसी ऊँची लहरें उठने लगीं। आकाश काले बादलों से ढक गया और मूसलाधार वर्षा होने लगी।

नाव लहरों पर डोलने लगी। लहरें राक्षसों के समान नाव को समूचा निगलने के लिए उस पर धावा बोलने लगीं।

सबको पता था कि उस तूफ़ान का कारण क्या था। यमाटो ने समुद्र की हँसी उड़ाकर समुद्र के राक्षस को नाराज़ कर दिया था। राक्षस जब एक बार बिगड़ जाता था तो फिर बलि लिए बिना शान्त नहीं होता था। नाव में बैठे हुए वीर चिल्लाए, "हम मनुष्यों से तो लड़ सकते हैं, परन्तु राक्षसों के सामने हम बेबस हैं। हमें बचाओ !"

यमाटो सिर झुकाए खड़ा सोच रहा था—'तूफ़ान को समाप्त करने का यही एक उपाय है कि मैं अपनी बलि दे दूँ। अपराध तो मैंने किया है, सबके जीवन को भला क्यों संकट में डालूँ ?'

तूफ़ान बढ़ता जा रहा था।

इधर उसकी पत्नी सोच रही थी—'मुझे अपने पति से सच्चा प्यार है तो उसका जीवन बचाने के लिए मुझे अपने जीवन की बलि देनी होगी। मेरे जीते जी-मेरा पति नहीं मर सकता।'

वह खड़े होकर चिल्लाई, "ऐ समुद्र के राक्षस, अपने पति का जीवन बचाने के लिए मैं अपने जीवन की बलि दे रही हूँ। इसे स्वीकार कर लो।"

और वह तूफ़ानी लहरों में कूद पड़ी।

उसी समय तूफ़ान समाप्त हो गया, समुद्र शान्त हो गया और वर्षा थम गई। आकाश पर सूर्य चमकने लगा।

नाव जंगलियों के द्वीप के तट से जा लगी। यमाटो और उसके वीरों ने जंगलियों से युद्ध करके उनका बल तोड़ दिया।

उन पर विजय पाने के बाद वे घर की ओर वापस लौटे।

यमाटो का मन बड़ा ही दुखी था। उसे अपनी पत्नी की याद

सता रही थी जिसने उसका जीवन बचाने के लिए अपनी बलि दे दी थी। उसका दिल भर आया और आँखों से आँसू टपकने लगे।

घर पहुँचने से पहले उसे एक और महान कार्य करना पड़ा।

जब वह एक नगर में पहुँचा तो वहाँ सन्नाटा देखा। सड़कें और बाज़ार सुनसान और वीरान पड़े थे। एक भी आदमी नहीं दिखाई दिया। घरों के द्वार बन्द थे।

वह आश्चर्य से चिल्लाया, ''अरे, कहाँ गए सब नगरवासी ?''

एक बन्द द्वार के पीछे से आवाज़ आई, ''एक राक्षस यहाँ आकर लोगों को खा जाता है। उसी के भय से हम घरों में छिपे बैठे रहते हैं। बस, अब वह आने ही वाला है।''

उसी समय राक्षस आग उगलता, फुँफकारता हुआ नगर में घुस आया। यमाटो ने एक भयंकर लड़ाई के बाद उसे तलवार से मार डाला।

नगरवासी घरों से बाहर निकलकर नाचने-गाने और उसकी जय-जयकार करने लगे।

एक दिनं वह घर पहुँच ही गया। माता-पिता ने उसे छाती से लगाया और नगरवासियों ने उसका शानदार स्वागत किया।

वह देश के सब डाकुओं और विद्रोहियों का सफ़ाया कर चुका था। चारों ओर सुख और चैन का राज्य फैल गया।

यमाटो का नाम अमर हो गया।

झील का राजा

फ़ूजी एक महान वीर था जिसकी वीरता की धूम सारे देश में मची हुई थी। कोई भी ऐसा न था जिसने उसका नाम न सुना हो।

उसे घर पर बैठकर आलसी जीवन बिताना पसन्द नहीं था। वह तो बस यह चाहता था कि संकटों में पड़कर उनका वीरता से सामना करता रहे क्योंकि एक वीर की शान इसी बात में होती है।

एक दिन वह संकटों की खोज में चला जा रहा था कि मार्ग में एक झील पड़ी। उस पर एक पुल था।

जब वह पुल पर पहुँचा तो एक आश्चर्यजनक दृश्य देखा।

एक भयंकर अजगर पुल पर इस प्रकार लेटा था कि उसकी पूँछ तो इस किनारे पर थी और सिर दूसरे किनारे पर। इस प्रकार उस अजगर ने पुल की पूरी लम्बाई घेर रखी थी।

अजगर सो रहा था और उसके नथुनों से साँस के साथ धुआँ और आग निकल रहे थे।

फ़ूजी के स्थान पर अगर कोई और होता तो तुरन्त भाग खड़ा होता, परन्तु वह तो एक महान वीर था।

बिना किसी भय और झिझक के वह आगे ही बढ़ता रहा, और अजगर के शरीर पर चलता हुआ पुल के उस पार पहुँच गया। अभी वह थोड़ी दूर ही गया था कि एक आवाज़ आई, "तनिक ठहरो !"



वह ठहर गया और पीछे मुड़कर देखा, आवाज़ देने वाले के सिर पर एक ताज जगमगा रहा था और उसके हरे रंग के वस्त्रों पर सीपियाँ टँकी हुई थीं।

पुल पर से राक्षस अजगर ग़ायब हो चुका था।

अभी वह इस रहस्य पर विचार कर ही रहा था कि वह कौन था और राक्षस अजगर अचानक ही कहाँ चला गया कि आवाज़ देने वाला उसके पास आकर बोला, "ऐ अजनबी, मेरी सहायता करो।"

फ़ूजी ने पूछा, "तुम कौन हो और मुझसे किस प्रकार की सहायता चाहते हो ? मैं तुम्हारे लिए क्या कर सकता हूँ ?"

वह बोला, " मैं इस झील का राजा हूँ और झील के अन्दर अपने परिवार के साथ सैकड़ों वर्षों से सुख-चैन से रह रहा था; परन्तु कुछ दिनों से हम एक भयंकर संकट में पड़ गए हैं। एक राक्षस कनखजूरा, जो सामने वाले पहाड़ों में रहता है, झील के अन्दर घुसकर मेरे परिवार के सदस्यों को खा जाता है। मैं उस राक्षस का कुछ भी नहीं बिगाड़ सकता। अतः मैंने सोचा कि किसी

मानव से सहायता लूँ।

" यही सोचकर मैं राक्षस का रूप धारण करके इस पुल पर आ लेटता हूँ कि कोई वीर तो ऐसा आएगा जो मुझसे डरकर न भागे। वही मेरी सहायता कर सकता है। अभी तक जितने भी इस ओर आए, मुझे देखते ही भाग खड़े हुए। तुम पहले वीर हो जो निर्भय होकर मुझ पर से होकर पुल पार कर गए। मुझ पर दया करो ! राक्षस को मारकर मुझ पर उपकार करो !"

फ़ूजी ने कहा, "क्या तुमने मेरा नाम नहीं सुना ? मैं फ़ूजी हूँ। मेरा काम ही संकटों से जूझना और कठिनाइयों में घिरे लोगों की सहायता करना है। वीर अपने लिए नहीं, दूसरों के लिए जीता है। मैं तुम्हारी सहायता अवश्य करूँगा।"

झील के राजा ने कहा, "अगर तुम फ़ूजी हो तो फिर मेरी मुसीबत दूर हो जाएगी। मैं जानता हूँ। एक बार मैंने सपने में भी देखा था कि तुम जैसा व्यक्ति ही उस राक्षस को मार सकता है।"

फ़ूजी ने पूछा, "अब तुम यह बताओ कि वह राक्षस रहता कहाँ है ?"

राजा ने उत्तर दिया, "ऐ वीर, वह राक्षस सामने वाले पहाड़ों में रहता है, परन्तु तुम्हारा वहाँ जाना आवश्यक नहीं है क्योंकि प्रत्येक दिन वह रात के समय झील के अन्दर मेरे महल में आता है।"

"तो फिर मुझे तुम्हारे महल में ही उसका इंतज़ार करना चाहिए," फ़ूजी बोला, "परन्तु तुम्हारा महल तो झील में पानी के अन्दर है। मैं वहाँ कैसे जाऊँगा ? डूब नहीं जाऊँगा !"

राजा ने कहा, "बस, मेरे पीछे-पीछे चले आओ।"

राजा ने पानी में डुबकी लगाई और उसके साथ ही फ़ूजी ने भी।

फ़ूजी झील के अन्दर नीचे की ओर चला जा रहा था। आश्चर्य की बात तो यह थी कि न तो पानी में उसका दम घुट

रहा था और न ही कपड़े भीग रहे थे।

यह तो चमत्कार ही था। ऐसा लगता था, जैसे वह अपने नगर की सड़क पर आराम से चला जा रहा हो—नीचे की ओर ! उसके आगे-आगे पानी फटता चला जा रहा था।

राजा उसके आगे-आगे चल रहा था और कहता जा रहा था :

''चले आओ !

इस झील के पानी की एक बूँद भी तुम पर नहीं पड़ सकती।

यह झील मेरा देश है।

इस पर मेरा राज है

फिर भी मैं कितना मजबूर हूँ—

भयंकर राक्षस के हाथों !

अब तुम आ गए हो

तो मेरे मन में आशाओं के दीप जल उठे हैं।

ऐ फ़ूजी, तुम्हारा स्वागत है !''

और फिर फ़ूजी ने अपने सामने नीले पत्थरों से बना एक शानदार महल देखा जिस पर मगरमच्छ पहरा दे रहे थे।

मगरमच्छों ने राजा को सलाम किया और वे दोनों अन्दर चले गए।

महल के अन्दर राजा के परिवार के सदस्यों ने उसका स्वागत किया और उसके सामने अनेक प्रकार के स्वादिष्ट भोजन परोसे गए। इतने में रंगीन मछलियों ने जलतरंग, सितार और बाँसुरी का संगीत छेड़ा और डोल्फिनों ने नाचना शुरू किया।

फ़ूजी तो वह दृश्य देखकर दंग रह गया। उसे पता नहीं था कि जलनगरी भी इतनी सुन्दर हो सकती है।

राजा ने भोजन के बाद सबको बताया कि अब उनके दुख दूर हो जाएँगे क्योंकि फ़ूजी जैसा वीर उनकी सहायता के लिए आ पहुँचा है।

सब खुशी से चिल्ला उठे, "अब राक्षस को उसके अत्याचारों और दुष्टता की सज़ा मिलेगी और हम सुख से रह सकेंगे।"

जब रात हुई और अँधेरा फैला तो सबके दिल धड़कने लगे। राक्षस के आने का समय आ पहुँचा था। अचानक एक भयंकर आवाज़ सुनाई दी जिसके कारण महल ज़ोर-ज़ोर से हिलने लगा। महल के अन्दर एकदम खलबली मच गई। बहुत-से तो ज़ोर-ज़ोर से रोने लगे।

फ़ूजी ने उनका साहस बढ़ाने के लिए कहा, "मेरे होते हुए तुम्हें क्या डर है ! चिन्ता न करो।"

यह कहकर वह महल के द्वार के ऊपर जा चढ़ा। उसने देखा, सामने से राक्षस आ रहा था। उसके नथुनों और मुँह से आग की लपटें निकल रही थीं। आँखें अंगारों जैसी दहक रही थीं। राक्षस की लम्बाई सैकड़ों गज़ थी।

जब राक्षस तनिक और पास आया तो फ़ूजी ने उस पर तीर चलाया, परन्तु तीर उसके शरीर से टकराकर गिर पड़ा।

वह उलझन में पड़ गया। उसका तीर कभी बेकार नहीं जाता था।

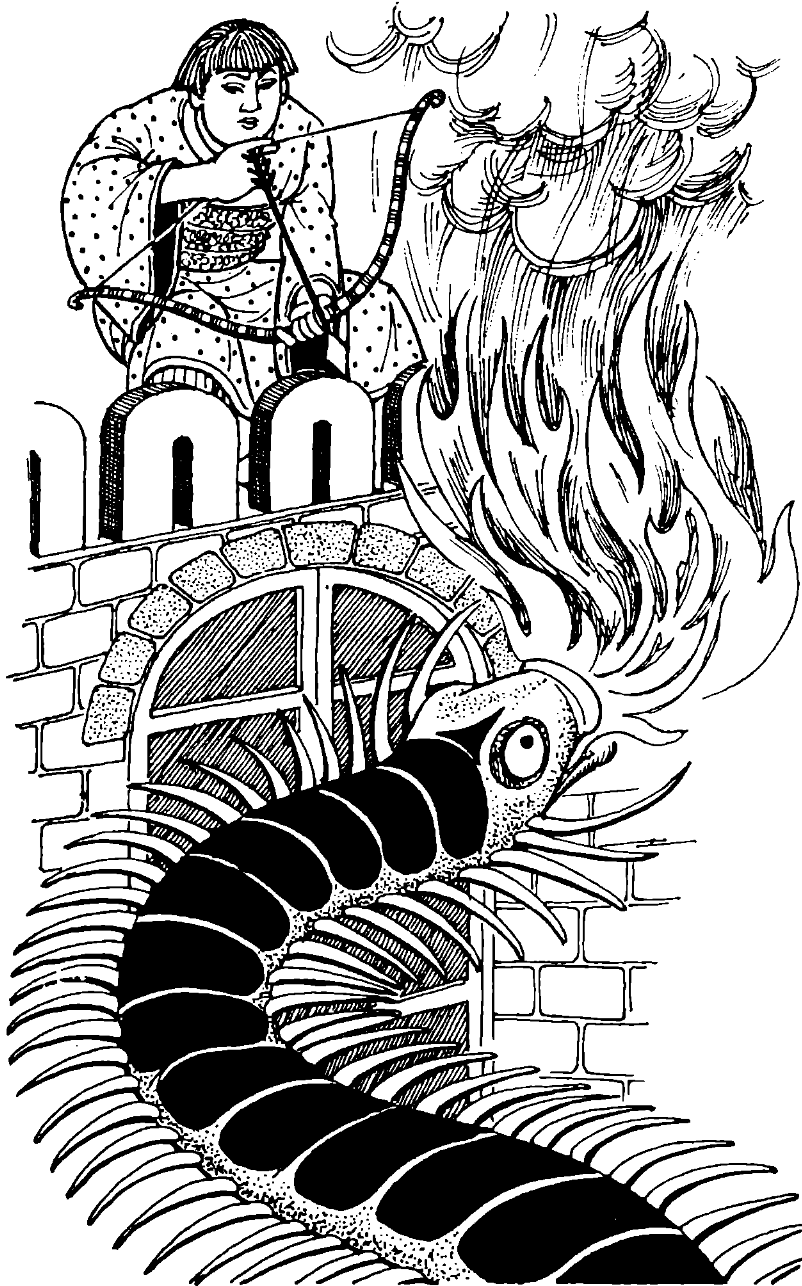
राक्षस का शरीर जैसे लोहे का बना था।

महलवासी, जो यह सारा दृश्य देख रहे थे, निराश होकर चिल्लाए, "अब हमें कौन बचाएगा ?"

फ़ूजी ने कहा, "मन छोटा न करो। अभी मेरे पास एक तीर और है। यह तीर उसे मार गिराएगा।"

उसने दूसरा तीर निकाला।

अचानक उसे याद आया कि राक्षस मानव का थूक सहन नहीं कर सकते। यह विचार मन में आते ही उसने तीर की नोक को मुँह में रखकर गीला किया और निशाना लेकर चला दिया। इस बार तीर निशाने पर लग गया। राक्षस ने एक दहाड़ मारी और आग उगलता हुआ पीछे लौटने लगा।



वह पीड़ा के कारण बार-बार अपनी पूँछ पटक रहा था और उसके शरीर से खौलता हुआ काले रंग का खून बह रहा था।

फ़ूजी ने महलवासियों से कहा, "अब तुम्हें हमेशा के लिए इससे छुटकारा मिल गया। अब तुम चैन की नींद सो सकते हो।"

झीलवासियों ने एक उत्सव-सा मनाया और सड़कों पर नाचने-गाने लगे। वे सब फ़ूजी की जय-जयकार कर रहे थे।

फ़ूजी कई दिनों तक राजा का मेहमान रहा।

आख़िर एक दिन उसने राजा से कहा, "मेरा काम हो गया है। अब मुझे जाने दो।"

राजा ने विनती की, "अब तुम हमारे साथ ही रहो। तुम्हारी जुदाई मुझसे सहन नहीं होगी।"

फ़ूजी ने समझाया कि वह धरती का वासी है और जल में नहीं रह सकता।

राजा मजबूर होकर उसे विदा करने के लिए तैयार हो गया और उसे एक थैली भेंट की, जिसमें से कितना भी चावल निकालो, वह भरी की भरी ही रहती थी।

राजा झील के बाहर उसे विदा कहने आया।

फ़ूजी जब पानी से निकलकर बाहर आया तो राजा ने दुखभरी आवाज़ में कहा, "जाओ मित्र, परन्तु तुम हमारे मन से कभी न जा सकोगे।"

और फिर राजा झील के पानी में छुप गया।

सूर्यमुखी

न जाने किस समय की बात है !

जापान में किसी स्थान पर एक सुन्दर लड़की रहती थी। उसके रूप की धूम सारे देश में मची हुई थी।

उसके सुनहरे बाल थे, बर्फ़ जैसा सफ़ेद रंग, सच्चे मोतियों जैसे झिलमिलाते दाँत और गुलाब की पँखुड़ियों जैसे होंठ थे।

उसके रूप के विषय में लोग कुछ ऐसी बातें किया करते थे :

'यह मानव नहीं, कोई परी है।'

'नहीं, यह तो सुन्दरता की देवी है।'

'इसका रूप देखकर चाँद भी शरमा जाए।'

'यह तो कोई सपनों की रानी है।'

'नहीं, यह तो किसी कवि की कल्पना है।'

वह जानती थी, लोग उसके रूप के गीत गाते हैं। अपनी सुन्दरता की प्रशंसा सुन-सुनकर उसे बड़ा अभिमान हो गया।

अब वह हर समय यही सोचती–'मेरे जैसा रूप और किसी का नहीं है। सुन्दरता में कोई भी स्त्री मेरी बराबरी नहीं कर सकती। मैं सबसे उत्तम हूँ। मैं सबसे बड़ी हूँ।'

वह अकड़कर चलती थी। किसी से मिलती-जुलती नहीं थी, बल्कि किसी से बात करना भी अपना अपमान समझती थी।

दूर-दूर से सुन्दर युवक उसके सामने आकर गिड़गिड़ाते :

‘मुझसे विवाह कर लो, सारा जीवन दास बनकर रहूँगा।’

‘मेरा हाथ थाम लो, संसार के सारे सुख तुम्हारे चरणों में लाकर डाल दूँगा।’



‘मेरी हो जाओ तो मेरा जीवन सफल हो जाए।’

‘अगर तुमने मुझे ठुकराया तो प्राण दे दूँगा।’

‘तुम्हारे लिए आकाश से तारे तोड़ लाऊँगा।’

‘तुम मेरे जीवन का आधार हो।’

परन्तु वह ऐसी बातों को एक कान से सुनकर दूसरे कान से निकाल देती थी।

एक-एक करके वे सारे ही युवक ठंडी साँसें भरते हुए निराश होकर लौट जाते।

उनमें से अनेक ऐसे भी थे जो झल्लाकर कहते :

‘घमंड का सिर नीचा होता है।’

‘किसी का रूप सदा नहीं रहता।’

‘रूप पर अभिमान अच्छा नहीं होता।’

‘जैसे तूने हमें दुख दिया है, वैसा ही दुख तुझे भी मिलेगा।’

'चाँद ने भी अपने रूप पर घमंड किया था। परिणामस्वरूप उसके मुँह पर धब्बा लग गया।'

वह सबसे यही कहती थी :

'तुममें से कोई भी मेरे योग्य नहीं है।'

'मेरा रूप तुम्हारे लिए नहीं है।'

'तुम तो मेरे चरणों की धूल भी नहीं हो।'

एक दिन एक बड़ी अनोखी बात हुई—

उसकी भेंट एक बहुत ही सुन्दर युवक से हुई। युवक की सुन्दरता को देखकर वह अपनी सुन्दरता भी भूल गई।

उस गोरे-चिट्टे, लम्बे-तड़ंगे युवक ने उस पर जादू-सा कर दिया।

परन्तु वह कौन था ? कहाँ से आया था ?—इन प्रश्नों के उत्तर उसने पूछने पर भी नहीं दिए—केवल मुस्कुराता रहा।

युवक ने उससे पूछा, "क्या तुम मुझे स्वीकार करोगी ?"

लड़की ने भी उससे यही प्रश्न किया, "क्या तुम मुझे स्वीकार करोगे ?"

दोनों ही एकसाथ मुस्कुरा दिए। उन्होंने एक-दूसरे को स्वीकार कर लिया।

दोनों साथ-साथ रहने लगे।

वह बहुत खुश थी। जीवन उसके लिए स्वर्ग था।

परन्तु युवक ने अपने विषय में फिर भी नहीं बताया।

एक दिन युवक ने उससे कहा, "अब मुझे जाना है।"

वह घबरा गई।

"जाने का नाम भी न लेना," उसने युवक के मुँह पर हाथ रखकर कहा, "मेरा मन बैठा जा रहा है।"

युवक बोला, "परन्तु मुझे तो जाना ही होगा। मैं मजबूर हूँ। इससे अधिक समय तक नहीं ठहर सकता।"



वह दुख-भरी आवाज़ में बोली, "कब वापस आओगे ?"

वह चुप रहा।

उसने फिर पूछा, "जा कहाँ रहे हो ?"

युवक केवल मुस्कुरा दिया। कुछ बोला नहीं।

वह तड़पकर बोली, "कुछ तो कहो, क्या रहस्य है तुम्हारा ?"

युवक ने फिर भी कुछ नहीं बताया।

वह सिसककर बोली, "अन्तिम प्रश्न कर रही हूँ। बताओ, क्या मैं तुम्हें देख सकूँगी ?"

"हाँ।" उसने सिर हिलाकर कहा।

लड़की ने पूछा, "कब और कहाँ ?"

युवक ने उत्तर दिया—

"हर सुबह तुम मुझे आकाश में पूर्व की ओर से आते हुए देखना। मैं दिन-भर आकाश पर यात्रा करके संध्या के समय पश्चिम में विश्राम करने जाया करूँगा।"

वह उसे रोकती रह गई; परन्तु उसे जाना ही था—और वह उसे रोता छोड़कर चला गया।

सारी रात वह उसकी याद में रोती रही। जब सवेरा होने को हुआ तो वह घर से बाहर आकर आकाश में पूर्व की ओर देखने लगी।

फिर वह पूर्व में दिखाई दिया—

उसका दिल ज़ोर-ज़ोर से धड़कने लगा।

वह अपनी आँखों से नीले आकाश में उसका पीछा करती रही। जिस ओर वह जाता, उसी ओर उसका चेहरा भी मुड़ जाता। और जब वह पश्चिम में विश्राम करने चला गया तो वह वहाँ बैठ गई—सवेरे के इंतज़ार में।

अगली सुबह फिर यही हुआ।

वह सारा दिन उसी को देखती रही।

इसी प्रकार महीने, फिर वर्ष बीत गए।

उसके पैर धरती में गड़ गए।

वह अपने स्थान से हिल नहीं सकती थी, परन्तु उसका चेहरा दिन-भर में पूर्व से पश्चिम की ओर घूमता रहता था।

और फिर लोगों ने उसे एक नया नाम दिया—सूर्यमुखी !

जिस ओर सूर्य होता है, उसी ओर उसका चेहरा होता है।

वह घमंडी लड़की फूल बन चुकी थी जिसे आज भी देखा जा सकता है।

वह इस आशा में सूर्य की ओर देखती है कि वह युवक उसके पास लौट आएगा—कभी न कभी... !

बर्फ़ की स्त्री

बहुत दिन हुए, जापान के किसी गाँव में दो लकड़हारे रहते थे जिनके नाम 'मुकासू' और 'किचि' थे। मुकासू बूढ़ा हो चुका था और किचि, जो उसका सहायक था, युवक था।

वे दोनों सवेरा होते ही जंगल की ओर चल देते थे जो गाँव से दस मील दूर था। मार्ग में एक नदी भी पड़ती थी जिसे वे नाव में बैठकर पार करते थे।

एक शाम जब वे जंगल से लौटे तो मौसम बहुत ही ख़राब था और बर्फ़ का तूफ़ान आया हुआ था।

जब वे नदी पर आए तो बड़ी चिन्ता में पड़ गए। नावक अपनी नाव नदी के तट पर छोड़कर कहीं चला गया था।

अब वे क्या करें ?

नदी में पानी का बहाव इतना तेज़ था और पानी इतना ठंडा था कि तैरकर उस पार जाने का प्रश्न ही नहीं उठता था।

अँधेरा गहरा होता जा रहा था—और तूफ़ान की तेज़ी भी बढ़ रही थी। वे बेबसी से इधर-उधर देखने लगे।

वहीं तट पर नावक की छोटी-सी झोंपड़ी थी। उस समय उन्हें उसी में शरण मिल सकती थी। ऐसी तूफ़ानी रात में वे जाते भी कहाँ !

वे जल्दी से झोंपड़ी में चले आए जहाँ फर्श पर केवल दो चटाइयाँ बिछी थीं—और कुछ भी नहीं था। अगर अँगीठी ही होती

तो भी बड़ा आराम मिलता।

उन्होंने झोंपड़ी का द्वार बन्द कर दिया और लम्बे कोटों में अपने शरीर को लपेटकर चटाइयों पर लेट गए।

मुकासू तो तुरन्त ही सो गया, परन्तु किचि न जाने कब तक जागता रहा ! बाहर बर्फ़ का तूफ़ान अब भी ज़ोर पर था और ठंडक हड्डियों में घुसी जा रही थी।

अभी उसकी आँख लगी ही थी कि अचानक एक खटके से खुल गई।

उसने जो कुछ देखा, उससे उसकी आँखें फटी की फटी रह गईं। बर्फ़ की बौछार उसके चेहरे से टकराई थी—और उसकी आँखों के सामने एक स्त्री खड़ी थी जो द्वार खोलकर अन्दर आई थी।

वह बड़ी ही अनोखी स्त्री थी। उसका रंग सफ़ेद था और उसने सफ़ेद ही वस्त्र पहन रखे थे। वह झुककर मुकासू के चेहरे पर फूँकें मारने लगी। जब भी वह फूँक मारती थी, उसके मुँह से बर्फ़ निकलती थी।

फिर वह किचि के पास आई और उसके चेहरे पर झुक गई।



किचि ने देखा, वह बड़ी ही सुन्दर थी, परन्तु उसकी आँखें देखकर उसका दिल ज़ोर-ज़ोर से धड़कने लगा।

किचि की आँखें खुली देखकर वह उसके कान में बोली, "इस बूढ़े की तरह मैं तुझे भी मार डालती, परन्तु मुझे तुझ पर दया आ गई क्योंकि तू अभी युवक ही है। एक बात याद रख, जो कुछ भी तूने अभी देखा है, अगर किसी को भी बताया तो मैं तुझे आकर मार डालूँगी।"

यह कहकर वह बाहर चली गई।

द्वार खुला हुआ था और उसमें से बर्फ़ अन्दर आ रही थी।

उसने जल्दी से द्वार बन्द किया और सोचने लगा–'कौन थी वह स्त्री जो बर्फ़ की तूफ़ानी रात में यहाँ आई और चली गई ? वह यहाँ क्या करने आई थी ? उसकी चेतावनी भी कैसी आश्चर्यजनक थी !'

फिर उसके मन में विचार आया–'यह भी तो हो सकता है कि वह केवल एक स्वप्न रहा हो !'

उसने मुकासू को आवाज़ें दीं, फिर उसे झंझोड़ा–मुकासू मर चुका था और उसका शरीर बर्फ़ जैसा ठंडा था।

जब दिन निकला तो तूफ़ान थम चुका था और दूर-दूर फैली हुई बर्फ़ सूर्य के प्रकाश में झिलमिला रही थी।

इतने में नावक अपनी झोंपड़ी में आया और देखा, उसमें मुकासू और किचि लेटे सो रहे थे; परन्तु नहीं...मुकासू मर चुका था और किचि बेहोश पड़ा था।

थोड़े समय बाद जब किचि को होश आया तो नावक के पूछने पर उसने केवल इतना कहा, "कल शाम नाव यहाँ न होने के कारण हम दोनों बर्फ़ से बचने के लिए इस झोंपड़ी में आ गए थे और सो गए थे। इसके अतिरिक्त मुझे और कुछ भी याद नहीं है। न जाने मुकासू कब मर गया !"

उसने उसे सफ़ेद स्त्री के विषय में कुछ नहीं बताया क्योंकि उसे उस स्त्री की चेतावनी याद थी।

घर पहुँचकर किचि कई दिनों तक बीमार रहा। सफ़ेद स्त्री और मुकासू की मृत्यु ने उसके मन पर बड़ा बुरा प्रभाव डाला था।

जब वह ठीक हो गया तो फिर जंगल से लकड़ियाँ लाने जाने लगा। अब वह अकेला ही जाता था क्योंकि मुकासू तो मर चुका था।

एक दिन वह जंगल से वापस आ रहा था कि दिन ढलने लगा। वह जल्दी-जल्दी पग उठाता हुआ चला जा रहा था क्योंकि रात होने से पहले वह घर पहुँचना चाहता था। अचानक मार्ग में उसे एक लड़की मिली जो बहुत सुन्दर थी—जैसे बर्फ़ की चाँदनी हो—सफ़ेद और ठंडक पहुँचाने वाली !

किचि ने पूछा, "इस घने जंगल में ऐसे समय, जब रात होने वाली है, तुम यहाँ क्या कर रही हो ? कौन हो तुम और कहाँ जा रही हो ?"

लड़की उसके प्रश्न सुनकर खिलखिलाकर हँस पड़ी, जैसे चाँदी की घंटियाँ बज उठी हों !

वह बोली, "मेरे माता-पिता मर चुके हैं और अब मैं किसी दूसरे गाँव सम्बन्धियों की खोज में जा रही हूँ।"

किचि ने पूछा, "क्या तुम्हारी सगाई हो चुकी है ?"

"अभी तक तो नहीं," उसने उत्तर दिया—और फिर उसने किचि से पूछा, "और तुम्हारी ?"

"माँ कहती है, अभी मैं छोटा हूँ।" किचि ने कहा, "अब तो रात हो रही है। तुम मेरे साथ मेरे घर चलो जहाँ केवल मेरी माँ है। आज की रात तुम हमारे साथ ही रहो—कल चली जाना।"

वह झट मान गई और दोनों बातें करते हुए घर आ गए। इतनी-सी देर ही में वे एक-दूसरे के मन को भा गए थे।

लड़की ने भी निश्चय कर लिया कि वह उसी के पास रहेगी। किचि की माँ ने भी उसे बहुत पसन्द किया क्योंकि वह उसकी बड़ी सेवा करती थी।

लड़की का नाम मूकी था। एक दिन मूकी और किचि पति-पत्नी बन गए।

मूकी बड़ी ही अच्छी पत्नी साबित हुई। उसने दस स्वस्थ बालकों को जन्म दिया।

परन्तु एक आश्चर्य की बात यह थी कि बालकों को जन्म देने से माता पर बुढ़ापा आने लगता है; परन्तु वह तो दस बालकों को जन्म देकर भी वैसी की वैसी ही थी बल्कि उसकी सुन्दरता और जवानी में और निखार आ गया था।

लोग उसे देखकर कहते : 'यह मूकी कौन है ?'

'क्या यह कोई जादूगरनी है ?'

'यह कोई साधारण स्त्री नहीं है।'

किचि भी इसी उलझन में रहता था—

'यह मूकी वास्तव में है कौन ? लड़कियाँ इस प्रकार जंगलों में मारी-मारी नहीं फिरतीं ! कोई भेद तो अवश्य ही है ! परन्तु क्या ? वह दस बालकों को तो जन्म दे चुकी है !'

एक रात एक बड़ी ही अनोखी घटना घटी—

रात काफ़ी बीत चुकी थी और बालक सब सो चुके थे।

मूकी काग़ज़ का लैम्प जलाए कुछ सी रही थी। किचि देर तक उसके चेहरे को तकता रहा, फिर गम्भीर आवाज़ में बोला—

"मेरी प्यारी पत्नी !"

"हाँ, कहो, क्या बात है ?"

"तुमसे एक बात पूछूँ ?"

"हाँ-हाँ, पूछो न ! क्या बात है ?" वह बोली।

"तुम बुरा तो नहीं मानोगी ?" किचि ने पूछा।



"अरे, तुम बात भी बताओगे या पहेलियाँ ही बुझाते रहोगे ? कहो, क्या पूछना चाहते हो ?"

वह धड़कते हुए दिल के साथ बोला, "प्यारी पत्नी ! इस लैम्प के प्रकाश में तुम्हारा चेहरा मुझे एक और चेहरे की याद दिला रहा है।"

उसने कपड़ा और सूई एक ओर रखकर किचि की आँखों में देखकर कहा, "कौन से चेहरे की बात कर रहे हो ?"

किचि ने बताया, " वर्षों पुरानी बात है। मैं और बूढ़ा मुकासू एक झोंपड़ी में बर्फ़ के तूफ़ान से बचने के लिए गए थे।

" जब हम सो रहे थे तो तुम्हारे जैसे चेहरे वाली एक स्त्री झोंपड़ी में आकर मुकासू को मार गई थी।

" उसने चलते-चलते मुझे चेतावनी दी थी कि मैं किसी को उसका भेद नहीं बताऊँगा। अगर बताया तो वह मुझे मार डालेगी।"

अचानक मूकी ज़ोर से चिल्लाई, "अरे मूर्ख, तूने तो वह भेद मुझे ही बता दिया। सुन, मैं ही वह स्त्री हूँ। ओ किचि, यह तूने क्या किया ! अगर अपने बालकों का ख़याल न होता तो मैं तुझे मार डालती। फिर भी सावधान ! बालकों को यह भेद न पता चले। मैं जा रही हूँ।"

दूसरे ही क्षण वह बर्फ़ बनकर घर से बाहर बिखर गई।

त्याग

बहुत दिनों की बात है, जापान के दक्षिणी भाग में एक गाँव बसा हुआ था। गाँव एक पहाड़ी के नीचे घाटी में था। पहाड़ी बहुत ऊँची थी और गाँव वालों को ऐसा लगता था जैसे उसकी चोटी बादलों को छू रही हो।

पहाड़ी की दूसरी ओर समुद्र था। बीच में वह पहाड़ी होने के कारण गाँव के लोग समुद्र को नहीं देख सकते थे।

गाँव वाले सब के सब मछेरे थे; परन्तु समुद्र तक पहुँचने के लिए उन्हें पहाड़ी का चक्कर लगाकर जाना पड़ता था। इस प्रकार गाँव की समुद्र से दूरी बढ़ जाती थी। गाँव समुद्र के तट पर इस कारण नहीं था क्योंकि पहाड़ी और समुद्र के बीच इतनी जगह ही नहीं थी। पहाड़ी की ढलान से समुद्र का पानी टकराता था। जब समुद्र में ज्वार-भाटा आता तो पानी ढलान के ऊपर चढ़ आता था।

उस पहाड़ी का एक लाभ यह था कि वह समुद्र की ओर से आने वाली हवाओं का ज़ोर कम कर देती थी।

उससे हानि यह थी कि गाँव वालों को पता ही नहीं चलता था कि समुद्र में कब तूफ़ान आया। उन्हें तो उसी समय पता चलता जब समुद्र का पानी पहाड़ी के दर्रों में से होकर गाँव में घुस आता और तबाही मचा देता।

सैकड़ों वर्षों से बसा हुआ वह गाँव वहाँ से हटाया भी तो नहीं

जा सकता था। और पहाड़ी के नीचे घाटी की मिट्टी बड़ी उपजाऊ थी। दूर-दूर तक चावल की खेती लहराती थी।

जब कभी समुद्र का पानी गाँव में आता और खेत डूबने लगते तो लोग बड़बड़ाते थे, "क्यों न हम कहीं और जा बसें ? इस प्रकार हम कब तक समुद्र के हाथों दुख झेलते रहेंगे ?"

परन्तु गाँव के बड़े-बूढ़े सिर हिलाकर कहते, "दुख कहाँ नहीं है ? जब तक साँस है तब तक दुखों को झेलना ही पड़ेगा। धीरज रखो, सब ठीक हो जाएगा। अपनी मिट्टी को छोड़कर जाना पाप है।"

और एक-दो दिन के बाद जीवन फिर सामान्य हो जाता। लोग अपने दुख भूल जाते।

अगली बार तूफ़ान आने पर फिर यही सब कुछ होता था।

उस पहाड़ी की सबसे अनोखी बात उसकी चोटी पर बनी एक झोंपड़ी थी।

पहाड़ी की चोटी पर कोई झोंपड़ी होना आश्चर्य की बात थी क्योंकि लोग समूह में रहना पसन्द करते हैं, न कि पहाड़ियों की सुनसान और वीरान चोटियों पर। वह झोंपड़ी 'किशी' की थी। किशी एक बूढ़ा था जो उस झोंपड़ी में अपने बेटे 'साटो' के साथ रहता था।

वर्षों पहले किशी नीचे गाँव ही में रहा करता था। वह और उसकी पत्नी सुख से जीवन बिता रहे थे कि एक दिन गाँववालों से उसका कुछ झगड़ा हो गया। वह गाँव छोड़कर अपनी पत्नी के साथ पहाड़ी की चोटी पर आकर बस गया और एक झोंपड़ी बना ली।

वहीं उसकी पत्नी ने साटो को जन्म दिया।

उसने चोटी पर ही छोटा-सा खेत बना लिया और उस पर अन्न उगाने लगा। जो कुछ भी फ़सल हो जाती थी, उनके लिए

बहुत थी।

एक दिन उसकी पत्नी बीमार पड़ी। दिन-प्रतिदिन उसकी हालत बिगड़ती गई। खाँसी और ताप ने उसे सुखा दिया और वह खून थूकने लगी।

किशी ने जड़ी-बूटियों से उसका इलाज किया, परन्तु उसका रोग न गया। वह हड्डियों का ढाँचा बनकर रह गई।

एक दिन ऐसा भी आया जब उसने किशी से कहा, "मैं एक लम्बी यात्रा पर जा रही हूँ।"

वह आश्चर्य में पड़ गया।

"लम्बी यात्रा !" वह बोला, "परन्तु तू तो उठ भी नहीं सकती ! यात्रा पर किस प्रकार जाएगी ?"



वह धीरे से मुस्कुराकर बोली, "जिस यात्रा पर मैं जा रही हूँ उस पर यात्री उठकर नहीं, लेटकर जाता है।"

किशी उलझकर बोला, "ऐसी कौन-सी यात्रा है ?"

"मैं देवताओं के पास जा रही हूँ।" पत्नी ने समझाया।

वह दुख में डूब गया। जीवन का एक ही तो साथी था,

उसका साथ भी छूट रहा था।

और उसकी पत्नी यह कहकर मर गई, "मेरे बालक को भरपूर प्यार देना। यह मेरी निशानी है।"

साटो अब जवान हो चुका था और बाप-बेटे उस चोटी पर सुख से जीवन बिता रहे थे।

एक दिन ऐसा हुआ कि आकाश पर काले बादल छा गए और भारी वर्षा होने लगी। उसके साथ ही भयंकर तूफ़ानी हवा चलने लगी। ऐसा लगता था, जैसे हवा के झक्कड़ उस पहाड़ी को ही उखाड़ फेंकेंगे ! हवा के ज़ोर से वृक्ष जड़ें छोड़कर गिर रहे थे।

फिर अचानक ही तूफ़ान थम गया।

किशी ने घबराकर कहा, "यह तो बहुत बुरा हुआ।"

साटो बोला, "बुरा क्यों हुआ ? तूफ़ान तो थम गया है।"

किशी बड़बड़ाया, "तूफ़ान का इस प्रकार अचानक थम जाना बड़े गम्भीर संकट की निशानी है।" यह कहकर वह समुद्र की ओर ध्यान से देखने लगा और फिर वह चिल्ला उठा—

"वही हुआ जिसका मुझे डर था। वह देख !"

साटो ने जो दृश्य देखा, वह ऐसा भयंकर था कि वह भी काँपने लगा।

तूफ़ानी समुद्र में पानी की एक दीवार-सी तट की ओर चली आ रही थी। अभी वह बहुत दूर थी, फिर भी उन्होंने अनुमान लगाया कि वह पानी की पचास फीट ऊँची लहरें रही होंगी।

साटो बेचैनी से बोला, "अब क्या होगा ? बताओ, हम क्या करें ? सैकड़ों फीट ऊँची चोटी पर हम तो सुरक्षित हैं; परन्तु इस लहर का एक ही रेला गाँव को नष्ट कर देगा। एक जन्तु भी न बच पाएगा।"

किशी अपना सिर पीटकर चिल्लाया, "मौत तेज़ी से गाँव की

ओर आ रही है। गाँव वालों को इसकी तनिक भी ख़बर नहीं। वे अपने घरों में आराम से बैठे होंगे। बेटा, तुरन्त ही कुछ करना होगा...''

''परन्तु क्या ?'' साटो ने पूछा।

''समय इतना कम है कि गाँव में जाकर लोगों को सतर्क करना असंभव है। हमारी आवाज़ भी उन तक नहीं पहुँच सकती। हम कुछ नहीं कर सकते। हम बेबस हैं।'' किशी बड़बड़ाया, ''मौत गाँव की ओर बढ़ी चली आ रही है। हम उसे देख रहे हैं—फिर भी हम कुछ नहीं कर सकते। ओह...ओह !''

साटो भी हाथ मलकर कह रहा था, ''काश, कोई उपाय ऐसा हो जिससे हम लोगों को सूचित कर दें—चौकन्ना कर दें ! परन्तु वह उपाय क्या हो ?''

पानी की दीवार निकट आने के कारण और भी ऊँची और भयंकर लग रही थी।

साटो गाँव की ओर देखकर बोला, ''अगर गाँव वाले पहाड़ी पर चढ़ आएँ तो उनके प्राण तो बच ही जाएँगे। अब तो वे उस लहरों की गड़गड़ाहट भी सुन रहे होंगे।''

अचानक किशी की आँखें एक नए विचार से चमक उठीं और उसने कहा, ''गाँव वालों को पहाड़ी पर तुरन्त बुलाने का केवल एक ही उपाय है।''

इससे पहले कि साटो उससे पूछता कि वह उपाय क्या है, किशी झोंपड़ी के अन्दर से जलती हुई एक लकड़ी उठा लाया और अपनी झोंपड़ी और खलिहान को आग लगा दी।

साटो कहता ही रह गया, ''अरे, अरे, यह क्या कर रहे हो ?''

फिर दूसरे ही क्षण बात उसकी समझ में आ गई। वह गाँव के लोगों का शोर सुन रहा था।

झोंपड़ी और खलिहान दोनों ही गीले होने के कारण आग



कम, धुआँ अधिक था। गाँव वाले शोर मचाते हुए पहाड़ी की चोटी की ओर चढ़े चले आ रहे थे। वे कह रहे थे, "किशी की झोंपड़ी में आग लगी है...खलिहान भी जल रहा है।...जल्दी से चलकर इसे बुझाओ..."

देखते ही देखते गाँव के सारे लोग पहाड़ी पर आ गए।

फिर एक भयंकर आवाज़ के साथ लहरें पहाड़ी से जा टकराईं। पूरी पहाड़ी हिलकर रह गई। दूसरे ही क्षण समुद्र का पानी दर्रे में से होकर गाँव पर झपटा—और उसे गड़प कर गया। जहाँ गाँव था, वहाँ झील-सी बन गई।

गाँव वाले, जो पहाड़ी पर चढ़ ही रहे थे, समझ गए कि किशी ने उनकी जानें बचाने के लिए ही अपनी झोंपड़ी और खलिहान को जला डाला था। उन सबको तुरन्त ही पहाड़ी पर बुला लेने का केवल एक वही उपाय था। इस त्याग के कारण किशी का नाम सदा अमर रहेगा।

दो आवाज़ें

बहुत पुरानी बात है। जापान में एक छोटा-सा नगर था जिसमें नगरवासियों की संख्या पंद्रह-बीस हज़ार से कम ही थी। नगरवासी अधिकतर या तो मछेरे थे या खेतों में चावल उगाते थे।

नगर क्योंकि समुद्र के तट पर था, इस कारण वहाँ जहाज़ भी आते थे। वहाँ एक मंडी भी थी जिसमें भिन्न-भिन्न प्रकार की दुकानें थीं। आस-पास के गाँवों से लोग वहाँ सामान ख़रीदने और बेचने आते थे।

लोगों के आने-जाने से नगर में बड़ी चहल-पहल रहती थी। बहुत-से लोगों को नगर में रातें भी बितानी पड़ती थीं। उनकी सुविधा के लिए नगर में कुछ सराएँ भी थीं जिनमें ठहरने वालों के लिए भोजन, बिस्तर और अँगीठी का प्रबन्ध किया जाता था।

जिस समय वहाँ सराएँ नहीं थीं तो बाहर से आने वालों को बड़ी असुविधा होती थी। उन्हें या तो अपने मित्रों के घरों पर ठहरना पड़ता, या वे सड़कों पर रातें बिताते थे। अब ऐसा नहीं था। रात बिताने के लिए कहीं-न-कहीं स्थान मिल ही जाता था।

कभी-कभी ऐसा होता था, जब किसी भी सराय में स्थान न मिलने पर लोगों को ठोकरें खानी पड़ती थीं।

परन्तु ऐसा बहुत ही कम होता था।

एक बार ऐसा हुआ कि जाड़ों का मौसम था। ऐसा भयंकर जाड़ा था कि नगर के बूढ़े भी थर-थर काँपते हुए यही कह रहे थे,

'ऐसा जाड़ा तो कभी नहीं पड़ा।'

'कम-से-कम हमारी याद में इतना जाड़ा नहीं पड़ा।'

'लगता है, सूर्य की गर्मी कम हो गई है और वह बर्फ़ का गोला बनकर रह जाएगा।'

'नहीं, बल्कि यह कहो कि देवता पृथ्वीवासियों से नाराज़ हैं।'

'धरती बर्फ़ बनकर रह गई है।'

'अब खेतों में चावल नहीं, बर्फ़ की खेती होगी।'

'संसार का अन्त होने वाला है।'

'सब हमारे पापों की सज़ा है।'

जितने मुँह, उतनी ही बातें। कारण कुछ भी रहा हो, जाड़ा बहुत था। पक्षी भी उड़कर गर्म स्थानों की ओर चले गए थे। जो नहीं जा सके थे, एक-एक करके अकड़कर मरते जा रहे थे।

जाड़ों के साथ ही बर्फ़ के तूफ़ानों का सिलसिला भी आरम्भ हो गया। हर समय आकाश से बर्फ़ गिरती रहती। घरों की छतें, वृक्ष, सड़कें, खेत—सबने बर्फ़ की सफ़ेद चादर ओढ़ रखी थी। न जाने कितने दिनों से लोगों ने नीला आकाश और सूर्य का चमकता हुआ चेहरा नहीं देखा था !

वे एक-दूसरे से कहते, 'क्या अब कभी सूर्य के दर्शन नहीं होंगे ? क्या यह संसार बर्फ़ में दबकर नष्ट हो जाएगा ?'

जाड़ों का एक ऐसा ही दिन था—

एक व्यापारी किसी दूर के गाँव से मंडी में चावल बेचने आया था। बर्फ़ गिरने के कारण मंडी में ग्राहक भी कम थे। दिन-भर वह मंडी में खड़ा रहा, फिर भी सारा चावल नहीं बिक पाया था। दिन ढलने लगा था और बर्फ़बारी के कारण उजाला वैसे ही कम था। अँधेरा गहरा होने लगा तो उसे चिन्ता होने लगी।

वह सोचने लगा, 'अब क्या होगा ? पहले तो दोपहर होने तक सारा चावल बेचकर दिन छुपने से पहले ही गाँव पहुँच जाता



था। आज क्या होगा ?'

परन्तु वह कर भी क्या सकता था ? बचे हुए चावल को ढोकर वापस ले जाना सरल काम तो न था ! इसी कारण उसने बचा हुआ चावल औने-पौने बेच दिया। फिर भी बहुत देर हो चुकी थी। अँधेरा फैल गया था।

उसने आकाश की ओर देखा तो समझ गया कि भयंकर तूफ़ान आने वाला है। वह बड़बड़ाने लगा, "ऐसे समय गाँव वापस जाना मूर्खता ही है। मार्ग ही में बर्फ़ में दबकर मर जाऊँगा। अब तो रात यहीं बितानी होगी।"

और वह ठिकाने की खोज में चल पड़ा।

उस दिन कुछ जहाज़ आने के कारण नगर में बाहर के लोग भी भारी संख्या में आए हुए थे।

वह जिस सराय में गया, केवल एक ही बात सुनने को मिली—

'यह सराय भरी हुई है।'

अब वह कहाँ जाए ? वह बीच सड़क पर इसी उलझन में

खड़ा था कि क्या करे, तभी बर्फ़ का तूफ़ान आरम्भ हो गया।

"ओह ! ओह !" वह चिल्लाया।

अचानक उस बर्फ़ीले अँधेरे में उसे हलका-सा प्रकाश दिखाई दिया। वह उसकी ओर बढ़ा। शायद वह कोई सराय ही थी। उसका द्वार आधा खुला हुआ था, जिसमें से अन्दर से प्रकाश बाहर आ रहा था।

उसने आवाज़ दी—

"कोई है अन्दर ?"

जब कोई उत्तर न मिला तो उसने द्वार थपथपाकर फिर आवाज़ दी, "क्या अन्दर कोई नहीं है ?"

इस बार किसी के खाँसने की आवाज़ के साथ ही द्वार खुला। एक बूढ़ा हाथ में दीपक लिये खड़ा था।

उसने पूछा, "क्या यह सराय ही है ?"

बूढ़े ने उत्तर दिया, "हाँ, है तो।"

उसने फिर पूछा, "क्या एक रात के लिए यहाँ ठहर सकता हूँ ?"

"अन्दर आ जाओ," बूढ़ा बोला, और जब वह अन्दर आ गया तो द्वार बन्द कर दिया। उसने देखा, वहाँ चटाई पर एक बूढ़ी बैठी थी।

बूढ़े ने उससे चटाई पर बैठने को कहा और उसके साथ ही वह भी चटाई पर बैठ गया। वह बूढ़े और बूढ़ी से बोला, "इस तूफ़ानी रात में, और ऐसे भयंकर जाड़े में, तुम्हारा द्वार खुला देखकर बड़ा आश्चर्य हुआ है।"

बूढ़े ने धीमी आवाज़ में कहा, "द्वार को इस आस में खुला रखा था कि कोई भूला-भटका यात्री रात बिताने को आ निकलेगा।"

वह बोला, "क्या कुछ खाने को मिलेगा ?"

बूढ़े और बूढ़ी ने एक-दूसरे की ओर देखकर ठंडी साँस भरी

और बूढ़ा बड़बड़ाया, "दो दिन से हम दोनों भूखे हैं। घर में खाने के लिए कुछ नहीं है—और इस तूफ़ान में सारी दुकानें भी बन्द होंगी।"

"ओह !" उसने कहा, "बड़े आश्चर्य की बात है। दूसरी सब सराएँ भरी पड़ी हैं परन्तु तुमने किसी यात्री के आने की आस में द्वार खोल रखा था। क्या तुम्हारी सराय में कोई ठहरने नहीं आता जो तुम दो दिन से भूखे हो ?"

दोनों चुप रहे।

वह बोला, "चलो, आज की रात भूखे ही सो रहेंगे। अब सोने का तो प्रबन्ध कर दो। नींद आ रही है।"

बूढ़े-बूढ़ी ने फिर एक-दूसरे की ओर देखा। बूढ़े ने कहा, "हमारे पास दो कमरे हैं। एक में हम रहते हैं और दूसरा यात्रियों के लिए है। आओ मेरे साथ।"

वह उसे बराबर वाले कमरे में ले गया जिसमें फ़र्श पर चटाई बिछी थी और चटाई पर एक कम्बल रखा था।

उसने बूढ़े से पूछा, "क्या अँगीठी नहीं मिल सकेगी ?"

"अँगीठी !" बूढ़ा कहने लगा, "अँगीठी के लिए कोयला चाहिए और कोयले के लिए पैसे, जो मेरे पास नहीं हैं।" दो घड़ी चुप रहकर वह कहता रहा, "केवल इस...कम्बल से ही काम चलाना होगा।"

न जाने क्यों 'कम्बल' शब्द बोलते समय बूढ़े की आवाज़ काँप रही थी।

उसने कम्बल ओढ़ते हुए कहा, "चलो, एक रात ही की तो बात है। कम्बल से ही काम चला लूँगा।"

"अब मैं जाऊँ ?" बूढ़े ने पूछा।

"हाँ," उसने कम्बल में शरीर को लपेटते हुए उत्तर दिया, "सवेरे भेंट होगी।" बूढ़ा चला गया।

न जाने क्यों उसके चेहरे से चिन्ता झलक रही थी।

वह सोचता ही रहा—सराय में किसी का न आना ! बूढ़े-बूढ़ी का भूखा होना ! सराय में अँगीठी का भी न होना ! 'कम्बल' का नाम लेते समय बूढ़े का हिचकिचाना !

न जाने इन सबका क्या रहस्य था !

बाहर बर्फ़ का तूफ़ान अपनी पूरी तेज़ी पर था और जाड़ा अपनी सारी सीमाएँ पार कर चुका था। न जाने कब उसे नींद आ गई !

अचानक उसकी आँख खुल गई। ये कैसी आवाज़ें थीं ? ऐसा लगता था, जैसे दो बालक एक-दूसरे से कह रहे हों :

'भैया, क्या तुम्हें भी जाड़ा लग रहा है ?'

'हाँ, क्या तुम्हें भी ?'

उसने चारों ओर देखा। बालक कहाँ थे ? वे आवाज़ें कहाँ से आ रही थीं ? कमरे में तो कोई भी न था !

'शायद वे आवाज़ें मैंने सपने में सुनी हों !' उसने मन में कहा, और फिर सो गया।

वह फिर जाग गया। वही आवाज़ें सुनाई दे रही थीं, 'भैया, क्या तुम्हें भी जाड़ा लग रहा है ?'

'हाँ, क्या तुम्हें भी ?'

उसने फिर उठकर देखा, परन्तु वहाँ तो कोई बालक नहीं था।

उसे बड़ा अचंभा हुआ। वह फिर लेट गया, परन्तु सो न सका। वे आवाज़ें निरन्तर सुनाई देती रहीं। जब भी उसकी आँख लगती, वही आवाज़ें फिर उसे चौंका देतीं।

किसी प्रकार रात कटी और सवेरा हो गया। शायद बर्फ़ का तूफ़ान समाप्त हो चुका था क्योंकि बाहर बर्फ़ सवेरे की धूप में चमक रही थी। वह उठकर बराबर वाले कमरे में आया जहाँ बूढ़ा और बूढ़ी बैठे थे।



बूढ़े ने पूछा, "कहो, कैसी नींद आई ?"

वह झुँझलाहट के कारण चुप रहा।

"कुछ तो बताओ !" बूढ़ी बोली।

वह सारी रात का जागा, जला-भुना बैठा था।

"मत करो नींद की बात," वह बिगड़कर कहने लगा, "यह सराय है या भूत-घर ? जब भी आँख लगती थी तो दो आवाज़ें सुनाई देती थीं..."

बूढ़ा उसकी बात काटकर बोला, " 'भैया, क्या तुम्हें जाड़ा लग रहा है ?'...'हाँ, क्या तुम्हें भी ?' "

"तो तुम आवाज़ों को जानते हो ?" उसने आश्चर्य से बूढ़े से पूछा, "क्या रहस्य है इनका ?"

बूढ़े ने ठंडी साँस भरी और कहा, " एक ऐसी ही भयंकर तूफ़ानी रात थी—जैसी कल थी। मैं और मेरी पत्नी बाहर गए थे। जब वापस आए तो उसी कमरे में से, जिसमें तुम सोए थे, ये आवाज़ें आईं—भैया, क्या तुम्हें जाड़ा लग रहा है ?'...'हाँ, क्या तुम्हें भी ?'

" मैं उस कमरे में गया तो दो बालकों को उस कम्बल के अन्दर एक-दूसरे से लिपटे और बातें करते देखा। उनके बिना आज्ञा के अन्दर आने पर मैं क्रोध में भर गया और उन्हें उस तूफ़ानी रात में बाहर निकाल दिया। बस, उसी समय से ये आवाज़ें सुनाई देती हैं। जो एक बार भी यहाँ सोने आता है, सारी रात जागता रहता है। मेरी सराय बदनाम हो गई है। लोग इन्हें भूतों की आवाज़ें कहते हैं—और यहाँ कोई नहीं आता। "

बूढ़े ने जब कहानी समाप्त की तो पति-पत्नी दोनों की आँखों से आँसू बह रहे थे।

लकड़हारा और सारस

बहुत दिनों की बात है। जापान के किसी गाँव में एक लकड़हारा रहता था। इस संसार में उसका कोई सम्बन्धी नहीं था और वह अपनी लकड़ी की छोटी-सी झोंपड़ी में अकेला रहता था।

सवेरे ही वह कुल्हाड़ी लेकर जंगल चला जाता, दिन-भर लकड़ियाँ काटकर निकट वाले नगर के बाज़ार में जाकर उन्हें बेच देता और वहाँ से कुछ खाने-पीने का सामान लेकर लौटता। बस, दो समय भोजन मिल जाता था।

परन्तु सबसे अधिक कठिनाई जाड़ों में होती थी। जब कड़ाके की ठंड पड़ती, आकाश पर बर्फ़ीली धुंध छाई रहती और धरती बर्फ़ के वस्त्र पहन लेती तो लकड़ी काटना बड़ा ही कठिन काम होता। फिर भी पेट भरने के लिए उसे जाना ही पड़ता था।

एक दिन सवेरे ही वह कुल्हाड़ी लेकर चल पड़ा। बड़ी ठंडी सुबह थी। रात-भर भारी बर्फ़बारी होती रही थी और ठंडी हवा के तेज़ झोंके हड्डियों में घुसे जा रहे थे। जंगल में वृक्षों पर बर्फ़ की मोटी तह जमी हुई थी।

उसने एक वृक्ष की शाखाओं पर से बर्फ़ हटाकर उन्हें काटना आरंभ किया।

उसके हाथ सुन्न हो गए थे और बर्फ़ जैसी ठंडी कुल्हाड़ी को पकड़ना भी सरल काम न था। वह बार-बार हाथ रोकता, हथेलियों को आपस में रगड़ता और फिर कुल्हाड़ी चलाने लगता। फिर भी

लकड़ी काटना दूभर हो रहा था।

इतने में बर्फ़ फिर गिरने लगी।

"आज लकड़ी काटना संभव नहीं है," वह हाथ रोककर बड़बड़ाया और वापस लौटने लगा।

ऊपर-नीचे, चारों ओर बर्फ़ ही बर्फ़ थी।

अचानक वह चलते-चलते ठहर गया। उसके सामने मार्ग में एक सारस पंख फड़फड़ा रहा था। उसका एक पंख घायल होने के कारण वह उड़ नहीं सकता था। लकड़हारे को उस पर दया आई और वह उसे अपने साथ ले आया। घर आकर उसने सारस का घाव धोया और कुछ बूटियों का लेप लगा दिया।



बर्फ़ जैसे सफ़ेद रंग, लम्बी-सी गर्दन और लाल चोंच वाला वह बड़ा ही सुन्दर पक्षी था। धीरे-धीरे उसका घाव भरने लगा। और एक दिन अचानक ही उसने अपने दोनों पंख फैलाए और देखते ही देखते वह नीले आकाश की ओर उड़ता चला गया।

लकड़हारा बहुत खुश था कि उसने एक प्राणी की सेवा की थी।

इस घटना के कई महीनों के बाद एक रात लकड़हारा अपनी झोंपड़ी में लेटा था। बर्फ़ का तूफ़ान आया हुआ था, भयंकर जाड़ा पड़ रहा था। गाँव की सड़कें बर्फ़ में दबी पड़ी थीं। गाँव वाले गहरी नींद सो रहे थे। कोई आवाज़ नहीं सुनाई देती थी। कभी-कभी कोई कुत्ता अचानक ही भौंकने लगता था।

झोंपड़ी में एक दीपक जल रहा था।

उसकी आँखें नींद से बोझल होने लगीं कि वह चौंक पड़ा। कोई द्वार खटखटा रहा था।

'ऐसे भयंकर तूफ़ान में इतनी रात गए कौन आया होगा ?' उसने सोचा, 'क्या यह स्वप्न तो नहीं ?'

परन्तु वह स्वप्न नहीं हो सकता था क्योंकि खटखटाने की आवाज़ अब भी आ रही थी। उसने उठकर द्वार खोला—और उसकी आँखें आश्चर्य से फटी की फटी रह गईं। एक बहुत ही सुन्दर लड़की खड़ी मुस्कुरा रही थी। उसके वस्त्रों और बालों पर बर्फ़ ही बर्फ़ थी।

वह बोली, "मैं बर्फ़ के तूफ़ान में रास्ता भूल गई और भटककर इस गाँव की ओर आ निकली हूँ। क्या मुझे अपनी झोंपड़ी में ठहरने दोगे ?"

"हाँ-हाँ, क्यों नहीं !" लकड़हारे ने कहा और उसे अन्दर ले आया। वह ऐसी सुन्दर थी, जैसे परियों के देश की कोई राजकुमारी हो !

अगले दिन लकड़हारे के उठने से पहले ही लड़की ने झोंपड़ी को सफ़ाई करके चमका दिया था और नाश्ता भी तैयार कर रखा था।

लकड़हारे ने उससे उसके विषय में पूछना चाहा, परन्तु वह हाथ उठाकर बोली, "मुझसे कभी कोई प्रश्न न करना।"

वह जंगल चला गया। दिन-भर के बाद जब वह लौटा तो

बहुत थका हुआ था। वह बड़बड़ा रहा था, "आज थोड़ी-सी लकड़ी काट सका। बर्फ़ के कारण हाथ गल गए हैं। यह भी कोई जीना है !"

लड़की ने मज़ेदार भोजन उसके सामने रखा और बोली, "चिंता न करो। भोजन के बाद बाहर चले जाओ और थोड़े समय के लिए मुझे अकेला छोड़ दो। सावधान, अंदर झाँककर न देखना।"

भोजन के बाद वह अपने मित्र के पास जा बैठा और जब वापस लौटा तो लड़की ने रेशम के कपड़े का एक थान उसे देकर कहा, "तुम्हारे दुखों के दिन बीत गए। अब तुम लकड़ी नहीं काटोगे। हर रात मुझे अकेला छोड़ देना और मैं तुम्हें एक थान दे दिया करूँगी। इसे नगर के बाज़ार में बेचकर तुम धनवान बन जाओगे। सावधान, मुझसे कोई प्रश्न न करना।"

नई बर्फ़ जैसी नर्म और दूध जैसी सफ़ेद रेशम थी। ऐसी प्यारी रेशम कभी बाज़ार में नहीं आई थी। हाथोंहाथ भारी क़ीमत पर बिक गई।

अब तो हर रात लड़की उसे एक थान दे देती थी जिसे बेचकर उसने बहुत-सा धन कमा लिया।

परन्तु यह भेद उसकी समझ में नहीं आया कि वह कौन थी ? कहाँ से आई थी ? हर रात वह एक थान कहाँ से लाती थी ?

एक रात लड़की ने कहा, "अब तुम जाओ और मुझे अकेला छोड़ दो।"

वह बोला, "जाता हूँ...परंतु आज मैं कुछ पूछना..."

लड़की ने उसकी बात काट दी, "मुझसे कभी कुछ मत पूछना और झोंपड़ी के अंदर न झाँकना...सावधान !"

वह चुपचाप बाहर चला गया और अपने मित्र के पास जा बैठा।



मित्र ने कहा, "यह लड़की कौन है ?"

"मुझे पता नहीं।"

"कहाँ से आई है ?"

"मुझे पता नहीं।"

"हर रात वह एक थान कहाँ से लाती है ?"

"मुझे पता नहीं।"

मित्र ने कहा, "तुम पता करते क्यों नहीं ?"

वह बोला, "उसने कहा है कि न तो मैं उसके विषय में कोई प्रश्न करूँ और न ही झोंपड़ी में झाँककर देखूँ। इसकी आवश्यकता ही क्या है ! उसने आकर मुझे धन भी दिया है और सुख भी।"

मित्र ने कहा, "फिर भी यह भेद खुलना ही चाहिए।"

उसने पूछा, "वह कैसे ?"

मित्र ने उत्तर दिया, "चलो, अभी छुपकर देखे लेते हैं।"

"परन्तु उसने सख़्ती से मना किया है।"

मित्र ने समझाया, "उसे पता ही नहीं चलेगा। देखते नहीं, कितनी अँधेरी रात है !"

वे उठकर गए और झोंपड़ी के अंदर झाँका। अरे...यह क्या ! लकड़हारा देखता ही रह गया...। वही सारस रेशम का थान बुन रहा था !

सारस ने उसकी ओर देखकर कहा, "मैं चाहता था कि तुम्हें भलाई का बदला दूँ क्योंकि तुमने मेरी जान बचाई थी; परन्तु तुमने मेरी बात न मानी और मेरा भेद जान लिया। मैं जा रहा हूँ।"

उसने पंख फैलाए और झोंपड़ी से बाहर आकर अँधेरी रात में उड़ गया। रेशम का थान अधूरा ही पड़ा रह गया।

लकड़हारे ने कहना चाहा, 'अरे, सुनो तो...मुझसे भूल हो गई ...क्षमा कर दो...'

लेकिन वह जा चुका था...

●●●



